रसूलुल्लाह ﷺ की आखिरी की वसीयतें

मुफ्ती तकी उस्मानी [दब]

इस्लाही खुत्बात हिन्दी/१२ (१०६-१३०) से मजमून का खुलासा

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहिम

वफात वाली बीमारी में लिखने के लिये थाल मंगवाना -
ये रिवायत हजरत अली (रदी) से बयान की गयी है. इस रिवायत में वो रसूलुल्लाह ﷺ की वफात की बीमारी का वाकिया बयान फरमा रहे है.

आपकी ये बीमारी कई दिन तक जारी रही और उन दिनों में हुजूर ﷺ मस्जिदे नब्वी में तशरीफ ना ला सके. आखिरी दिन जब हुजूर ﷺ के इन्तेकाल का वकत करीब था उस वकत का वाकिया हजरत अली (रदी) बयान फरमा रहे है. वो ये की जब हुजूर ﷺ की तबीयत ज़्यादा नासाज़ हो गयी तो आपने मुझसे फरमाया की ऐ अली! मेरे पास कोई थाल ले आवो, जिसमें वो बात लिख दूं की जिस्के बाद मेरी उम्मत गुमराह ना हो.

उस ज़माने में कागज़ का इतना ज़्यादा रिवाज नहीं था,

इसलिये कभी चमडे पर लिख लिया, कभी पेड के पत्तों पर लिख लिया, कभी हड्डियों पर लिख लिया, कभी मिट्टी के बरतन पर लिख लिया. चुनान्चे हुजूरﷺ ने हजरत अली (रदी) से लिखने के लिये थाल मंगवाया.

रसूलुल्लाहﷺ की आखिरी वसीयतें - हजरत अली फरमाते है की उस वकत रसूलुल्लाहﷺ की तबीयत इतनी ज़्यादा नासाज़ थी की मुझे ये अन्देशा हुवा की अगर में लिखने के लिये कोई चीझ तलाश करने जाउंगा तो कहीं मेरे पीछे ही आपकी रूह परवाज़ ना कर जाये इसलिये मेंने रसूलुल्लाहﷺ से कहा की आप जो कुछ फरमायेंगे, में उस्को याद रखूंगा और बाद में उस्को लिख लूंगा.
हजरत अली (रदी) फरमाते है की उस वकत रसूलुल्लाहﷺ का सर मुबारक मेरे बाजुवों के बीच था.
उस वकत आपकी ज़बान मुबारक से जो कलिमात निकल रहे थे वे ये थे "नमाज़ का ख्याल रखो, ज़कात का ख्याल रखो और तुम्हारी मिल्कियत में जो गुलाम और बांदियां है, उन्का

ख्याल रखो, और अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-ना मुहम्मदन् अब्दुहू व रसूलुहू की गवाही पर कायम रहो, जो शख्स इस गवाही पर कायम रहेगा अल्लाह तआला जहन्नम को उस शख्स पर हराम फरमा देंगे।" ये नसीहतें रसूलुल्लाहﷺ ने आखिरी वकत इरशाद फरमाई.

उपरोक्त वाकिया खुद हजरत अली (रदी) ने बयान फरमाया, इसमें कई बातें समझने की है.

पहली बात - ये है की इसी तरह का एक वाकिया हजरत उमर (रदी) के साथ भी पेश आया था.

ये वाकिया जिस्का ज़िक्र हजरत अली (रदी) ने फरमाया, ये खास उस दिन का वाकिया है जिस दिन रसूलुल्लाहﷺ का इन्तेकाल हुवा, और हजरत उमर (रदी) के साथ इन्तेकाल से तीन दिन पहले ऐसा ही वाकिया पेश आया था.

उस दिन भी रसूलुल्लाहﷺ की तबीयत बोझल और नासाज़ थी और हजरत उमर (रदी) आपके पास थे. हुजूरﷺ के चचा हजरत अब्बास (रदी) भी करीब थे. उस वकत भी आपने उन

हजरात से फरमाया था की कोई कागज़ वगैरह ले-आवो ताकि में ऐसी बात लिख दूं जिस्के बाद तुम गुमराह ना हो.

हजरत फारूके आज़म (रदी) ये देख रहे थे की सरकारे दो आलमﷺ की तबीयत ज़्यादा नासाज़ है और इस हालत में अगर हुज़ूरﷺ कुछ लिखवाने की मशक्कत उठायेंगे तो कहीं आपकी तबीयत और ज़्यादा खराब ना हो जाये.

इस वजह से हजरत उमर फारूक (रदी) ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह! अल्लाह तआला की किताब हमारे पास मौजूद है और आप पहले ही बहुत-से इरशादात बयान फरमा चुके है, इसलिये ये मशक्कत उठाने की ज़रूरत नहीं.

ये वाकिया जो हजरत फारूके आज़म (रदी) के साथ पेश आया था.

इस्को शियाओं ने एक पहाड बना लिया और इस्की बुनियाद पर हजरत फारूके आज़म (रदी) पर ये इल्ज़ाम लगाया की अल्लाह की पनाह! उन्होंने रसूलुल्लाहﷺ को वसीयत लिखने से रोका और दर हकीकत रसूलुल्लाहﷺ ये वसीयत

लिखना चाहते थे की मेरे बाद हजरत अली (रदी) को खलीफा बनाये मगर हजरत फारूके आज़म हुजूरﷺ की इस मन्शा को समझ गये इसलिये उन्होंने बीच में आकर हुजूरﷺ को इस वसीयत लिखने से मना फरमा दिया और रूकावट डाल दी, जिस्के नतीजे में रसूलुल्लाहﷺ खिलाफत की वसीयत ना लिखवा सके.

इस वाकिये को बुनियाद बनाकर शियाओं ने हजरत फारूके आज़म (रदी) के खिलाफ तोहमतों का एक तूफान खडा कर दिया.

हालांकि बात सिर्फ इतनी थी की हजरत फारूके आज़म (रदी) ने ये देखा की ऐसा ना हो की लिखने की मशक्कत की वजह से हुजूरﷺ की तबीयत और ज़्यादा खराब हो जाये. और ये भी जानते थे की अगर कोई बहुत अहम बात लिखनी होगी तो सिर्फ मेरे कहने की वजह से हुजूरﷺ उस बात को बयान करने से नहीं रूकेंगे.

हकीकत ये है की रसूलुल्लाहﷺ को अगर कोई बात बयान

करनी होती और उस बात को हुजूरﷺ ज़रूरी भी समझते तो क्या सिर्फ हजरत फारूके आज़म (रदी) के मना करने की वजह से उस बात को बयान करने से रूक जाते? हुजूरﷺ ने तो हक बात पहुंचाने में किसी बडे से बडे इन्सान की भी परवाह नहीं की.

ये हिमाकत और गुमराही की बात है जो इन शियाओं ने इख्तियार की है.

और दूसरी तरफ इसी तरह का वाकिया हजरत अली (रदी) के साथ भी पेश आया की रसूलुल्लाहﷺ ने हजरत अली (रदी) से फरमाया था की थाल ले आवो ताकि में कुछ लिखवा दूं.

लेकिन हजरत अली (रदी) फरमाते है की उस वकत रसूलुल्लाहﷺ की तबीयत इतनी नासाज़ थी की मुझे अन्देशा हुवा की अगर में लिखने के लिये थाल लेने जाउंगा तो मेरे पीछे कहीं हुजूरﷺ की रूह परवाज़ ना कर जाये इसलिये वो भी लिखने के लिये कोई चीझ नहीं लाये.

अब देखियें की हजरत अली (रदी) ने भी वही काम किया जो हजरत फारूके आज़म (रदी) ने किया था. इसलिये अगर हजरत फारूके आजम (रदी) पर कोई एतिराज़ होता है तो हजरत अली (रदी) पर भी एतिराज़ होता है.

बल्की हजरत अली (रदी) पर एतिराज़ ज़्यादा होता है क्यूकी हजरत फारूके आज़म (रदी) के साथ जो वाकिया पेश आया वो इन्तेकाल से तीन दिन पहले पेश आया और उस वाकिये के बाद तीन दिन तक हुज़ूरﷺ दुनिया में तशरीफ फरमा रहे. इसलिये अगर कोई ज़रूरी बात लिखवानी थी तो हुज़ूरﷺ बाद में भी लिखवा सकते थे.

और हजरत अली (रदी) के साथ जो वाकिया पेश आया वो ठीक इन्तेकाल के वकत पेश आया और उस वाकिये के फौरन बाद हुज़ूरﷺ का इन्तेकाल हो गया.

इसलिये अगर उस वाकिये से हजरत फारूके आज़म (रदी) पर एतिराज़ हो सकता है तो हजरत अली (रदी) पर ज़्यादा हो सकता है.

दोनों बुजुर्गों सहाबा ने सही अमल किया

- बात दरअसल ये है की दोनों बुजुर्गों सहाबा ने वही काम किया जो एक जाँनिसार सहाबी को करना चाहिये था. दोनों ये देख रहे थे की रसूलुल्लाहﷺ की तबीयत नासाज़ है.

हम और आप उस वकत की हालत का अन्दाज़ा भी नहीं कर सकते जो उस मौके पर सहाबा किराम पर हुजूरﷺ को बीमार देखकर गुज़र रही थी. ये वे हजरात सहाबा किराम थे जो हुजूरﷺ के एक सांस के बदले हज़ारों जिन्दगियां कुरबान करने के लिये तैयार थे. हुजूरﷺ की बीमारी और आपकी तकलीफ उन हजरात के लिये रूह को तडपाने वाली थी.

इसलिये उन दोनों हजरात ने वही काम किया जो एक जाँनिसार सहाबी को करना चाहिये था. वो ये की ऐसे मौके पर सरकारे दो आलमﷺ को जहां तक मुमकिन हो तकलीफ से बचाया जाये और ये दोनों हजरात जानते थे की आपकी सारी ज़िन्दगी अल्लाह तआला के दीन का पैगाम पहुंचाने में और फैलाने में खर्च हुई और कोई ज़रूरी बात ऐसी नहीं है जो

हुज़ूरﷺ ने खुले शब्दों में बयान ना फरमादी हो. इसलिये कोई ऐसी बात नहीं है जिस्को इसी वकत लिखवाना ज़रूरी हो और अगर कोई बात ऐसी होगी भी तो हम उस्को ज़बानी सुनकर याद रखेंगे.

फिर साथ ही इस हदीस में ये भी आ-गया है की हुज़ूरﷺ जो बातें लिखवाना चाहते थे वे उसी वकत इरशाद भी फरमादी. जिसकी वजह से पता चल गया की हुज़ूरﷺ क्या लिखवाना चाह रहे थे और वही बातें हजरत अली (रदी) ने रिवायत फरमादी जिस्के नतीजे में ये बात सामने आ-गयी की वे बातें जिन्की हुज़ूरﷺ बार-बार ताकीद फरमा चुके थे उसीको और ज़्यादा ताकीद के साथ हमेशा के लिये महफूज़ करने की खातिर लिखवाना चाह रहे थे.

चुनान्चे आपने फरमाया अब नमाज़ की ताकीद और ज़कात की ताकीद और गुलामों के साथ अच्छे सुलूक की ताकीद कोई नई बात नहीं थी लेकिन सिर्फ इसलिये बातें बयान फरमाई ताकि उम्मत को पता चल जाये की हुज़ूरﷺ ने दुनिया

से जाते-जाते जिन बातो ताकीद फरमाई वे ये थी.

इसलिये ना खिलाफत का कोई मसला था और ना ही अपने बाद किसी को जाँनशनी बनाने का मामला था.

बहरहाल शियाओं ने हजरत फारूके (रदी) के खिलाफ एतिराजों का जो तूफान खडा किया था उस्का इस हदीस से बिल्कुल खात्मा हो जाता है क्यूकी हजरत अली (रदी) के साथ वही मामला पेश आया जो हजरत फारूके आज़म (रदी) के साथ पेश आया था.

रसूलुल्लाहﷺ के हुक्म का पालन ना करने की वजह - दूसरी बात जो इस हदीस से मालूम हुई वो ये की रसूलुल्लाहﷺ ने हजरत फारूके आज़म (रदी) के वाकिये में कागज़ मंगवाया और हजरत अली (रदी) के वाकिये में थाल मंगवाया, लेकिन ये दोनों हजरात ये चिझें नहीं लाये.

अब बज़ाहिर देखने में ये नज़र आता है की रसूलुल्लाहﷺ के हुक्म की तामील नहीं हुई लेकिन तामील ना होने की वजह

अल्लाह की पनाह! ये नहीं थी की सरकारे दो आलमﷺ के हुक्म की कोई एहमियत नहीं समझी, बल्की वजह ये थी की ये हजरात जानते थे की अगर इस वकत कोई चीझ लिखने के लिये लायेंगे तो रसूलुल्लाहﷺ की तबीयत पर और ज़्यादा बोझ होगा.

इस्से मालूम हुवा की अगर अपना बडा कोई काम करने को कहे और छोटे ये देखें की इस काम से उन्को तकलीफ होगी और उस्से उनकी तबीयत पर बोझ होगा तो बडे को तकलीफ से बचाने के लिये छोटे ये कह दे की इस काम को दूसरे वकत के लिये टाल दे, तो इसमें ना तो कोई नाफरमानी है और ना ही इसमें कोई बे-अदबी है. बल्की अदब और मुहब्बत का तकाज़ा ही ये है की उन्की राहत का और उन्की सेहत का ख्याल किया जाये.

पूरे दीन का खुलासा - तीसरी बात जो इस हदीस को बयान करने का असल मकसद है. वे नसीहतें है जो रसूलुल्लाहﷺ ने इस मौके पर इरशाद फरमाई और जिन

बातों की ताकीद फरमाई. इस्से ये मालूम होता है की सारी ज़िन्दगी दीन के जो एहकाम आप बयान फरमाते रहे और जो तालीमात लोगों के सामने फैलाते रहे उन्का खुलासा वे बातें है जो हुज़ूरﷺ ने दुनिया से जाने के वकत इरशाद फरमाई.

एक और हदीस जो हजरत अली (रदी) से बयान की गयी है, जिसमें आपने फरमाया की आखिरी वकत में जब हुज़ूरﷺ की आवाज़ आहिस्ता हो गयी तो मेंने आपके मुंह पर कान लगाकर सुना तो आखिरी वकत तक हुज़ूरﷺ की ज़बान मुबारक पर ये अलफाज़ थे नमाज़ का ख्याल करो और अपने मातेहतों का ख्याल करो.

1. नमाज़ की एहमियत

इस्से मालूम हुवा की सरकारे दो आलमﷺ को तमाम दीन के एहकाम और तालीमात में जिन चीजों का सब्से ज़्यादा एहतिमाम था वो अल्लाह के हकों में नमाज़ थी.

एक और रिवायत से मालूम हुवा की अल्लाह तआला के

जिन हुकूक का सब्से ज़्यादा एहतिमाम था, वे दो तरह के हुकूक थे, एक जानी और एक माली. जानी हुकूक में नमाज़ और माली हुकूक में ज़कात.

और बन्दों के हुकूक में गुलामों और खादिमों और नौकरों और मातेहतों के हुकूक.

इसलिये रसूलुल्लाहﷺ को फिक्र और चिन्ता ये थी की कहीं मेरी उम्मत मेरे बाद दीन के इन एहकाम में कोताही ना करे क्यूकी हुज़ूरﷺ जानते थे की इनमें कोताही का नतीजा तबाही है, जहन्नम है और अल्लाह तआला का अज़ाब है. इसलिये दुनिया से जाते वकत हुज़ूरﷺ ने इनकी ताकीद फरमादी.

आखिरत में नमाज़ के बारे में सब्से पहले सवाल होगा -

कुरान व हदीस नमाज़ की ताकीद से भरे हुये है. जगह-जगह बार-बार इरशाद फरमाया गये है. हदीस शरीफ में आता है की आखिरत में सब्से पहले नमाज़ के बारे में सवाल होगा. नमाज़ के बारे में हिसाब होगा की कितनी नमाज़े पढी, कितनी नमाज़ें छोडी, कितनी नमाज़ें कज़ा करके पढी. आखिरत की

तैयारी के लिये सब्से पहला काम ये है की इन्सान सब्से पहले अपनी नमाज़ का हिसाब लगाये की मेरे ज़िम्मे कोई नमाज़ बाकी है या नहीं?

मुख्तसर तौबा का तरीका - इसी वजह से हमारे बुज़ुर्गों का तरीका ये है की जब कोई शख्स उन्के पास "इस्लाही ताल्लुक" (यानी अपने को सुधारने का ताल्लुक) कायम करने की गरज से आता है. या उनसे बैअत करता है तो सब्से पहले "तौबा को पूरा करने" की तालीम दी जाती है. एक मुख्तसर तौबा होती है और एक तफसीली तौबा होती है.

मुख्तसर तौबा ये है की "सलातुत्तौबा" की नीयत से दो रकात नफिल पढे और फिर बहुत ही आजिज़ी और इन्कीसारी के साथ अल्लाह तआला के सामने अपने तमाम पिछले गुनाहों से तौबा करे की या अल्लाह! मुझसे पिछली ज़िन्दगी में जितने गुनाह हुये है, छोटे हों या बडे, और जितने फराईज़, वाजिबात मुझसे छूटे है, में आपसे उन सबकी माफी मांगता हूं. सब्से तौबा व इस्तिगफार करता हूं. ऐ अल्लाह! मुझे माफ

फरमा दीजिये और मेरी तौबा कबूल फरमा लीजिये. ये "मुख्तसर तौबा" है.

पिछली नमाज़ों का हिसाब - मुख्तसर तौबा करने के बाद फिर तफसीली तौबा करे.

तफसीली तौबा का मतलब ये है की गुज़रे ज़माने में जो गलतियां हुई है उनमें से जिन्की तालफी मुमकिन है उन्की तलाफी शुरू कर दे.

जैसे ये देखें की अपनी पिछली ज़िन्दगी में मेरी नमाज़ें छूटी है या नहीं? इन्सान जिस दिन बालिग हो जाता है उस दिन से उस पर नमाज़ फर्ज़ हो जाती है, चाहे वो लडका हो या लडकी हो. लडके का बालिग होना ये है की बालिग होने की निशानियां जाहिर हो जाये और लडकी का बालिग होना ये है की उस्की माहवारी शुरू हो जाये. और बालिग होते ही दोनों पर नमाज़ फर्ज़ हो जाती है.

इसलिये तफसीली तौबा करते वकत सब्से पहले ये देखें की जिस दिन से बालिग हुवा हूं उस दिन से आज तक मेरी कोई नमाज़ छूटी है या नहीं? अगर नहीं छूटी तो इस पर अल्लाह

तआला का शुक्र अदाकरे. और अगर छूटी है तो फिर इस्का हिसाब लगाये की मेरे ज़िम्मे कौनसी नमाज़ कितनी बाकी है. अगर पूरी तरह ठीक-ठीक हिसाब लगाना संभव नहीं है तो फिर मोहतात अन्दाज़ा लगाये.

अगर बालिग होने की तारीख याद नहीं है तो फिर चौदह साल की उम्र के बाद से हिसाब लगाये. इसलिये की हमारे इलाकों में चौदह साल पूरे होने पर बच्चे बालिग हो जाते है.

इसलिये ये अन्दाज़ा लगाये की चौदह साल की उम्र से लेकर आज तक कितनी नमाज़ें कज़ा हुई होगी. इस्का एक मोहतात अन्दाज़ा लगा ले. अन्दाज़ा लगाने के बाद किसी बुक में नोट कर ले. जैसे अन्दाज़ा लगाने के बाद पता चला की तीन साल की नमाज़ें बाकी है. अब बुक के अन्दर लिख ले की तीन साल की नमाज़ें मेरे ज़िम्मे है और फिर आज ही से उन्को अदा करना शुरू कर दे. ये "कज़ा-ए-उम्री" कहलाती है.

कज़ा-ए-उम्री अदा करने का तरीका - कज़ा-ए-उम्री की अदायगी का तरीका ये है की हर फर्ज़ नमाज़ के साथ एक

कज़ा नमाज़ पढना शुरू कर दे. जैसे फज़र के साथ फज़र, ज़ोहर के साथ ज़ोहर, असर के साथ असर, मगरिब के साथ मगरिब, इशा के साथ इशा.

और हर कज़ा नमाज़ की नीयत का तरीका ये है की अगर फज़र की नमाज़ कज़ा कर रहा है तो ये नीयत करे, की मेरे ज़िम्मे जितनी फज़र की नमाज़ें कज़ा है उनमें से सब्से पहली फज़र की नमाज़ पढ रहा/रही हूं. इसी तरह ज़ोहर की नमाज़ कज़ा करते वकत ये नीयत करे की मेरे ज़िम्मे ज़ोहर की जितनी नमाज़ें कज़ा है उनमें से सब्से पहली ज़ोहर की नमाज़ पढ रहा/रही हूं. इसी तरह असर, मगरिब और इशा में नीयत करे. और अगले दिन फिर यही नीयत करे और उस्से अगले दिन फिर यही नीयत करे.

नमाज़ों के फिदये की वसीयत - और अपनी बुक के अन्दर ये लिख दे की में आज की तारीख से कज़ा-ए-उम्री शुरू कर रहा हूं. और हर नमाज़ के साथ एक नमाज़ पढ रहा हूं और तीन साल की नमाज़ें मेरे ज़िम्मे कज़ा है.

अगर कज़ा नमाज़े पूरी होने से पहले मेरा इन्तेकाल हो जाये तो बाकी नमाज़ों का फिदया मेरे तर्के (छोडे हुये माल) में से अदा कर दिया जाये. अगर आपने ये वसीयत नहीं लिखी तो फिर वारिसों के ज़िम्मे ये वाजिब नहीं होगा की वे आपकी नमाज़ों का फिदया ज़रूर अदा करें, क्यूकी ये तुम्हारा माल उस समय तक तुम्हारा है जब तक तुम्हारी आंख खुली हुई है.

जब मौत की बीमारी शुरू हो जाती है तो उस्के बाद से वो माल तुम्हारा नहीं रहता बल्की तुम्हारे वारिसों का हो जाता है. और अब तुम्हारे लिये उस माल में सिर्फ एक तिहाई की हद तक तसररूफ करना जायज़ है. एक तिहाई से ज़्यादा तसररूफ करना जायज़ नहीं.

इसलिये अगर तुमने नमाज़ों का फिदया अदा करने की वसीयत नहीं की तो अगरचे तुम्हारे वारिसों को लाखों रूपये मिल गये हों तब भी उन पर ये वाजिब नहीं है की वे तुम्हारी नमाज़ों का फिदया अदा करें. हां अगर वे अपनी खुशी से

तुम्हारी नमाज़ों का फिदया अदा करें तो उन्को इख्तियार है.

वसीयत लिखनी चाहिये - इसलिये हर आदमी को ये वसीयत लिखनी चाहिये की अगर में अपनी ज़िन्दगी में अपनी नमाज़ों की कज़ा ना कर सका तो में वसीयत करता हूं की मेरे तर्के (छोडे हुये माल) से मेरी नमाज़ों का फिदया अदा किया जाये. और साथ में नमाज़ें पढना शुरू कर दो.

अगर ये दो काम कर लिये तो फिर अल्लाह तआला की रहमत से उम्मीद है की मानलो अगर नमाज़ें पूरी होने से पहले ही मर गये तो इन्शाअल्लाह माफी हो जायेगी.

लेकिन अगर ये दो काम ना किये, ना तो वसीयत की और ना ही नमाज़ों को अदा करना शुरू किया तो इस्का मतलब ये है की नमाज़ जैसे अहम और ज़रूरी फरीज़े से ये आदमी लापरवाह है.

आज ही से अदायगी शुरू कर दो - दुनिया के सारे काम-धन्धे चलते रहेंगे लेकिन हर इन्सान के लिये सब्से ज़रूरी

काम ये है की वो ये देखें की मेरे ज़िम्मे कितनी नमाज़ें बाकी है. अगर बाकी है तो आज ही से उन्को अदा करना शुरू कर दे, कल पर ना टाले.

ये शैतान बडी अजीब चीझ है. ये इन्सान को इस तरह बहकाता है की इन्सान को पता भी नहीं चलता की मुझको शैतान बहका रहा है.

चुनान्चे ये शैतान मुस्लमान के दिल में ये ख्याल नहीं डालेगा की नमाज़ कोई ज़रूरी चीझ नहीं है की इस्को छोड दो, इस्की कोई एहमियत नहीं है, बल्की दिल में ये ख्याल डालेगा की नमाज़ वैसे तो बडी ज़रूरी चीझ है लेकिन ऐसे वकत में नमाज़ शुरू करो की उस्के बाद पाबन्दी से पढो.

इसलिये आज तो जरा तबीयत माईल नहीं है कल से नमाज़ शुरू करेंगे या परसों से शुरू करेंगे. क्यूकी अगर तुमने नमाज़ शुरू करके कल को छोड दी तो उल्टा तुम पर वबाल होगा. इसलिये अभी मत शुरू करो. पहले फलां काम निमटा लो और हफ्ते-दस दिन के बाद शुरू करोगे तो फिर पाबन्दी हो

जायेगी. शैतान टालता रहता है. चुनान्चे जिस काम की वजह से नमाज़ को टलाया था जब वो काम हो गया तो अगले हफ्ते और कोई काम सामने आ जायेगा. इसी तरह शैतान आज को कल पर और कल को परसों पर टलाता ही चला जायेगा और फिर ज़िन्दगी भर वो "कल" नहीं आती.

आज का काम कल पर मत टालो - काम करने का रास्ता यही है की जिस काम को करना है उस्को टलाना नहीं है. उस काम को आज ही से और अभी से और इसी वकत से शुरू कर दिया जाये तब तो वो काम हो जायेगा.
लेकिन अगर तुमने उस्को टाल दिया तो उस्का अन्जाम ये होगा की फिर वो काम नहीं हो पायेगा.
इसी वजह से एक हदीस में रसूलुल्लाह ﷺ ने इरशाद जब सुबह का वकत हो तो शाम का इन्तेज़ार मत करो, और जब शाम का समय हो तो सुबह का इन्तेज़ार मत करो, और अपने आप को कबर वालो में समझो. गोया की में आज कबर में जाने वाला हूं. इसलिये किसी काम को टालो नहीं.

सेहत और फुरसत को गनीमत जानो -

बहरहाल जब गुज़रे ज़माने की नमाज़ें अदा करनी ही है तो फिर इन्तेज़ार किस बात का है? जब ये ज़रूरी काम है तो इस्को फौरन करो.

अब अल्लाह तआला ने सेहत दे रखी है. क्या पता कल को बीमारी आ-जाये और उस्की वजह से नमाज़ अदा ना कर सको. अब तो अल्लाह तआला ने फरागत दे रखी है, कल को ये फरागत बाकी रहे या ना रहे. अभी तो अल्लाह तआला ने नमाज़ों की तलाफी का जज़्बा दिया हुवा है, कल को ये जज़्बा बाकी रहे या ना रहे.

इसलिये जब नमाज़ों की अदायगी का ख्याल आया तो उस्को टालो नहीं, बल्की अभी से और इसी वकत से शुरू कर दो.

कज़ा नमाज़ों की अदायगी में सहूलियत - कज़ा नमाज़ के लिये अल्लाह तआला ने ये सहूलियत रखी है की उस्को ऐसे वकत में भी पढा जा सकता है जिस वकत में दूसरी नमाज़ें नहीं पढी जा सकती.

जैसे सुबह सादिक के बाद से सूरज निकलने तक कोई

नफिल या सुन्नत पढना जायज़ नहीं. लेकिन कज़ा नमाज़ की इस वकत भी इजाज़त है. या जैसे असर की नमाज़ के बाद से सूरज के छुपने तक कोई नफिल या सुन्नत नहीं पढ सकते, यहां तक की तवाफ की दो रकाते भी असर के बाद पढना जायज़ नहीं.

बल्की अगर किसी ने असर की नमाज़ के बाद कई तवाफ कर लिये है तो उस्के लिये हुक्म ये है की वो मगरिब की नमाज़ के बाद तमाम वाजिब तवाफ एक साथ अदाकरे.

लेकिन कज़ा नमाज़ उस वकत भी जायज़ है. अल्लाह तआला ने ये सहूलियत और आसानी इसीलिये दी है की मुस्लमान को जब भी अपनी कज़ा नमाज़ों को अदा करने का ख्याल आये तो वो उसी वकत से अदा करना शुरू कर दे, उस्के लिये कोई रूकावट ना हो.

जागते ही पहले फज़र की नमाज़ अदा करो - एक हदीस में रसूलुल्लाहﷺ ने इरशाद फरमाया ये इरशाद याद रखने का है, खास तौर पर उन लोगों को याद रखना चाहिये जिन्की

नमाज़ें किसी वजह से कज़ा होती रहती है. फरमाया कि अगर कोई शख्स नमाज़ से सो गया और नींद की हालत में नमाज़ का वकत गुज़र गया और जब जागा तो वकत गुज़र चुका था.

या कोई शख्स नमाज़ पढना भूल गया और उस वकत याद आया जब नमाज़ का वकत गुजर चुका था, तो ऐसे शख्स के लिये रसूलुल्लाहﷺ फरमा रहे है की जैसे ही वो जागे और जिस समय उस्को याद आ-जाये तो फौरन नमाज़ पढ ले. क्यूकी जिस वकत उस्को नमाज़ पढना याद आया उस्के लिये नमाज़ का समय वही है. (मुसन्नफ इब्ने अबी शैबा/ 2/64)

फज़्र के लिये जागने का इन्तेज़ाम करलो - जैसे कोई शख्स उठने के लिये पूरा इन्तेज़ाम करके सोये. यानी किसी शख्स को जगाने के लिये कह दिया और घडी का अलार्म भी लगा दिया लेकिन उस्के बावजूद वकत पर आंख नहीं खुली और उस वकत आंख खुली जब सूरज निकल चुका था, तो चूंकि जागने का इन्तेज़ाम करके सोया था इसलिये

इन्शाअल्लाह गुनाह नहीं होगा बशर्तेकि जैसे ही आंख खुले तो उस वकत पहला काम ये करे की वुज़ू करके नमाज़ अदाकरे. इसलिये की उस्के लिये यही नमाज़ का समय है.

उस समय ये ना सोचे की नमाज़ कज़ा तो हो ही गयी चलो बाद में पढ-लूंगा. अब तो जिस वकत भी पढूंगा कज़ा ही होगी. बल्की उसी वकत नमाज़ पढले, उस्को आगे ना टाले. अगर ये कर लिया तो नमाज़ कज़ा करने का गुनाह भी नहीं होगा. और अगर जागने का इन्तेज़ाम नहीं किया था तो फिर गुनाहगार होगा.

अल्लाह तआला ने कज़ा नमाज़ के लिये इतनी आसानिया रख दी ताकि, बन्दे के ज़िम्मे नमाज़ छोडने का वबाल और कज़ा का बोझ ना रहे.

इस्से मालूम हुवा की अल्लाह तआला और अल्लाह के रसूलﷺ हम पर बडे मेहरबान है. इसलिये हर मुस्लमान को इस्की फिक्र करनी चाहिये की उस्के ज़िम्मे नमाज़ का कोई

हिसाब बाकी ना रहे.

अल्लाह तआला हम सब्को इस्की तौफीक अता फरमाये. आमीन.

2. दूसरी चीझ “ज़कात"

ज़कात का पूरा-पूरा हिसाब करो - दूसरी चीझ “ज़कात" का बयान फरमाया. जकात की एहमियत भी नमाज़ के बराबर है. जहां कुरान करीम में नमाज़ का हुक्म आया उसी के साथ ज़कात का हुक्म भी आया फरमाया तर्जुमा - और नमाज़ अदा करो और ज़कात अदा करो. (सुरे बकरा/आयत 43) "ज़कात" का भी यही हुक्म है की तौबा के मुकम्मल और पूरा होने के लिये ये ज़रूरी है की आदमी ठीक-ठीक एक-एक पायी का हिसाब करके ज़कात अदाकरे.

हमारे समाज में ज़कात के बारे में भी बडी लापरवाही पायी जाती है. जो मुस्लमान अल्लाह तआला के फज़ल व करम से जकात देने का एहतिमाम करते है और जकात निकालते है वे भी जकात का पूरा हिसाब सही करके बहुत कम निकालते है, बल्की वैसे ही अपने माल का अन्दाज़ा करके ज़कात दे

देते है. हमारी ताजिर बिरादरी में अन्दाज़ा करके ज़कात निकालने का ज़्यादा रिवाज है, हालांकि ज़कात निकालने का पूरा सही तरीका ये है की अपने माल का पूरा सही हिसाब करके फिर ज़कात निकालनी चाहिये.

ज़कात की एहमियत - बहरहाल तौबा के मुकम्मल और पूरा होने का एक लाज़मी हिस्सा ये है की माल का पूरा-पूरा हिसाब करके ज़कात निकाली जाये. आपने देखा की सरकारे दो आलमﷺ दुनिया से जाते वकत इस बात की नसीहत फरमा रहे है की नमाज़ और ज़कात का एहतिमाम करो. ये दो चिझें तो रसूलुल्लाहﷺ ने अल्लाह के हुकूक के बारे में ज़िक्र फरमाई.

३. मातेहतों के हुकूक की एहमियत [बन्दों के हुकूक]

गुलाम और बांदियों का ख्याल रखो - इस्के बाद तीसरी चीझ "बन्दों के हुकूक" में से बयान फरमाई इसलिये इरशाद फरमाया - इस्का शाब्दिक अर्थ ये है की उन चीज़ों का ख्याल रखो जो तुम्हारे दाहिने हाथ की मिल्कियत है.

अरबी भाषा में इस शब्द से “गुलाम" और "बांदी" मुराद होते है.
कुरान करीम में भी ये शब्द इसी अर्थ में बार-बार इस्तेमाल हुवा है. पहले ज़माने में गुलाम और बांदियां होती थी जो इन्सान की मिल्कियत होती थी. इसलिये इस शब्द के जाहिरी मायने ये है की गुलामों और बांदियों का ख्याल रखो. उन्के साथ अच्छा सुलूक करो और उन्के हुकूक पूरी तरह अदा करो.

"मा म-लकत् ऐमानुकुम" में तमाम मातेहत दाखिल है -

मेरे वालिद हजरत मुफ्ती मुहम्मद शफी साहिब (रह) फरमाया करते थे की यहां पर लफ्ज़ "मा म-लकत् ऐमानुकुम" में सिर्फ गुलाम और बांदियों की बात नहीं है बल्की इस लफ्ज़ से हर तरह के मातेहत मुराद है. चुनान्चे हजरत वालिद साहिब (रह) इस्का तर्जुमा "मातेहत लोग" से किया करते है.
इसलिये नौकर, मुलाज़िम सब इसमें दाखिल है. इसी तरह जो शख्स दूसरे लोगों पर अमीर (हाकिम और सरदार) हो,

उस अमीर के मातेहत जितने लोग हों वे सब इसमें दाखिल है. और इसमें औरतें भी दाखिल है, क्यूकी अल्लाह तआला ने घराने का अमीर मर्द को बनाया है और औरत को उस्का मातेहत बनाया है. इसलिये इस शब्द में औरतें भी दाखिल है.

बहरहाल रसूलुल्लाहﷺ ने कितना ठोस लफ्ज़ बयान फरमाया जिसमें तमाम मातेहतों के हुकूक दाखिल हो गये.

मातेहत अपना हक नहीं मांग सकता - इस लफ्ज़ के जरिये रसूलुल्लाहﷺ ने ये बता दिया की जो लोग भी तुम्हारी मातेहती में है और जिन पर अल्लाह तआला ने तुमको हाकिम बनाया है, उन्के हुकूक का खास तौर पर ख्याल रखो. इस्की ताकीद इसलिये फरमाई की जो आदमी बराबर का होता है वो तो किसी भी वकत अपने हक का मुतालबा कर लेता है. लेकिन जो बेचारा मातेहत है उस्के लिये अपने हक का मुतालबा करने में रूतबा और दर्जा रूकावट है.

कभी-कभी वो अपने हक का मुतालबा करने में बेज़बान होता

है. इसलिये जब तक तुम्हारे दिल में अल्लाह तआला का खौफ नहीं होगा और जब तक तुम्हारे दिल में इस बात का ख्याल नहीं होगा की मुझे खुद इस्के हुकूक (अधिकारों) का ख्याल रखना है, उस समय तक उस्के हुकूक ठीक-ठीक अदा नहीं हो सकते.

नौकर को कमतर मत समझो - इसी तरह आजकल जो मुलाज़िम और नौकर होते है उन्को अपने से कमतर और हकीर समझना बडी जहालत की बात है.

अगर तुमने किसी को अपना नौकर रखा है, चाहे वो घर के काम के लिये ही क्यूना रखा हो, सिर्फ इतनी बात है की तुमने उस्के साथ एक मुआहिदा (एग्रीमेंट) किया है वो नौकर मुआहिदे का एक पक्ष है, तुमने उस्की सेवाएं खरीदी है, और उसने अपनी सेवाएं तुम्हें बेची है, और उस्के बदले में तुमने उस्को पैसे और तनख्वाह (वेतन) देना तय किया है.

इसलिये तुम भी मुआहिदे के एक फरीक (पक्ष), हो और वो भी मुआहिदे को एक फरीक (पक्ष) है.

तुम और तुम्हारा नौकर दर्जे में बराबर है -

मान लो की तुम कहीं बाज़ार में किसी दुकान पर जावो और दुकानदार से कोई सौदा खरीदो. तुम उस्को पैसे दे रहे हो और दुकानदार सौदा दे रहा है. तो क्या इस लेन-देन करने के नतीजे में तुम्हारा दर्जा ज़्यादा हो गया और दुकानदार का दर्जा कम हो गया? नहीं! बल्की तुम दोनों बराबर के फरीक हो. तुम पैसे दे रहे हो और वो सौदा दे रहा है. इसी तरह तुम्हारा मुलाज़िम और तुम्हारा नौकर भी इस मायने में तुम्हारा बराबर का फरीक है की तुम पैसे दे रहे हो और वो अपनी सेवाएं दे रहा है.

इसलिये दर्जे के एतिबार से उस्को कमतर और हकीर समझना और उस्को अपमानित नज़रों से देखना किसी तरह भी जायज़ नहीं.

तुम्हारे नौकर तुम्हारे भाई है - एक हदीस में रसूलुल्लाह ﷺ ने इरशाद फरमाया की तुम्हारे खादिम, नौकर और मुलाजिम सब तुम्हारे भाई है. सिर्फ इतनी बात है की अल्लाह तआला

ने उन्को तुम्हारा मातेहत बना दिया है. इसलिये उन्को उसी खाने में से खिलावो जो तुम खाते हो, और उसी कपडे में से पहनावो जो तुम पहनते हो. (बुखारी शरीफ)

रसूलुल्लाहﷺ ने मातेहतों के बारे में ये शिक्षा दी. ये नहीं की वो अगर तुम्हारा नौकर हो गया तो अब वो जानवर हो गया. और फिर उस्के साथ जानवरों जैसा सुलूक करो और उस्के साथ अपमान भरा व्यवहार करो. अरे वो मुलाजिम तुम्हारा भाई है, उस्के साथ भाईयों जैसा सुलूक करना चाहिये.

अल्लाह तआला को तुम पर ज़्यादा कुदरत हासिल है -

हदीस शरीफ में आता है की एक बार रसूलुल्लाहﷺ हजरत अबू मसउद अन्सारी (रदी) के पास से गुजरे, वो अपने गुलाम पर गुस्सा कर रहे थे और डांट रहे थे, और करीब था की वो उस गुलाम को मारें. जब सरकारे दो आलमﷺ ने उन्को देखा तो उनसे फरमाया की जितनी कुदरत तुम्हें इस गुलाम पर हासिल है, अल्लाह तआला को उस्से ज़्यादा तुम पर कुदरत हासिल है. (मुस्लिम शरीफ)

इसलिये अगर तुम इस्के साथ गुस्से का मामला करोगे या इस्को मारोगे या इस्के साथ ज़्यादती करोगे तो अल्लाह तआला इस्का बदला तुमसे लेगे.

अबू मसउद अन्सारी (रदी) की शान देखये की गुस्सा आ-रहा है. गुस्से की हालत में है और गुलाम को मारने के करीब है, और गुलाम को मारने के लिये हाथ उठा लिया है. लेकिन जब सरकारे दो आलमﷺ का एक जुमला (वाक्य) सुना की अल्लाह तआला को तुम पर इस्से ज़्यादा कुदरत हासिल है जितनी कुदरत तुम्हें इस गुलाम पर हासिल है.

उसी वकत फरमाया की या रसूलुल्लाह! मेंने इस गुलाम को आजाद कर दिया. कहां तो गुस्सा आ-रहा है, उस्को डांट रहे है, और कहां उस्को बिल्कुल आज़ाद कर दिया.

ये अहमकाना ख्याल है - कभी-कभी हमारे दिमागों में ये अहमकाना ख्याल आ जाता है की काश हम भी रसूलुल्लाहﷺ के ज़माने में होते. याद रखये! ये अहमकाना (मूर्खतापूर्ण) ख्याल है.

क्यूकी अगर उस ज़माने में होते तो मालूम नहीं किस गढे में गिरे होते. अल्लाह तआला जिस्को जो मुकाम देते है उस्का ज़र्फ देखकर देते है.

ये सहाबा किराम (रदी) ही का ज़र्फ था की वो सरकारे दो आलमﷺ की सोहबत का हक अदा कर गये. सहाबा किराम (रदी) अपने एक-एक अमल से सरकारे दो आलमﷺ के हुक्म की इताअत और तामील की मिसाल कायम करके चले गये. रसूलुल्लाहﷺ के एक-एक कलिमे पर उन्के सारे जज़्बात कुरबान थे.

ज़्यादा सज़ा देने पर पकड होगी - रसूलुल्लाहﷺ दुनिया से जाते-जाते इरशाद फरमा गये की अपने मातेहतों का ख्याल करो. इस्की वजह ये है की अल्लाह के हुकूक की तलाफी तौबा व इस्तिगफार से हो जाती है, लेकिन अगर तुमने अपने मातेहतों पर जुल्म व ज़्यादती करली और वो मातेहत भी बेज़बान है जो तुम्हें कुछ नहीं कह सकता तो उस्के साथ ज़्यादती की तलाफी का कोई रास्ता नहीं है.

हदीस शरीफ में आता है की एक बार एक सहाबी ने रसूलुल्लाहﷺ से पूछा या रसूलुल्लाह! अगर मेरा गुलाम कोई गलती करे या कोई गलत काम करे तो में उस्को सज़ा दे सकता हूं या नहीं?

रसूलुल्लाहﷺ ने जवाब में फरमाया की सज़ा तो दे सकते हो मगर इस बात का ख्याल रखना की तुम्हारी सज़ा उस्की गलती के बराबर होनी चाहिये. इसलिये अगर तुम्हारी सज़ा उस गलती से कम रही तो अल्लाह तआला तुम्हारा हक उस गुलाम से आखिरत में दिला देंगे, लेकिन अगर तुम्हारी सज़ा उस्की गलती से बढ गयी तो कियामत के दिन उस्का हाथ होगा और तुम्हारा गिरेबान होगा.

और अल्लाह तआला उस ज़्यादती का बदला तुमसे दिलवायेंगे. ये सुनकर वो सहाबी चीख पडे और कहा की या रसूलुल्लाह! कहीं ऐसा ना हो की मुझसे ज़्यादती हो गयी हो. आपने फरमाया की क्या कुरान करीम में तुमने ये आयत नहीं पढी? तर्जुमा - जो शख्स एक ज़र्रे के बराबर भी भलाई करेगा

वो आखिरत में अपने सामने उस्को देखेगा. और जो शख्स एक ज़र्रे के बराबर बुराई करेगा आखिरत में अपने सामने उस्को देखेगा. (सूरे ज़िल्ज़ाल आयत 7,8)

इसलिये अपने मातेहत को सज़ा तो दो लेकिन तौल कर दो. जितना उस्का कसूर है कहीं उस्से ज़्यादा तो सज़ा नहीं दे रहे हो?

उन सहाबी ने फरमाया की या रसूलुल्लाह! ये तो बडा मुश्किल काम है, में कहां से बराबरी का पैमाना लाउंगा. इसलिये आसान रास्ता ये है की में अपने गुलाम को आज़ाद ही कर देता हूं. चुनान्चे उस गुलाम को आजाद कर दिया. अल्लाह तआला ने इन मातेहतों के इतने हुकूक रखे है.

रसूलुल्लाहﷺ की तरबियत का अन्दाज़ - जब रसूलुल्लाहﷺ हिजरत करके मदीना तय्यबा तशरीफ लाये तो हजरत अनस (रदी) के वालिद हजरत अबू तल्हा (रदी) और उन्की वालिदा हजरत उम्मे सुलैम (रदी) इन दोनों ने आपस में मश्विरा किया की रसूलुल्लाहﷺ के पास कोई

खादिम नहीं है, हम क्यूना अपने बेटे को आपकी खिदमत में पेश कर दे की ये आपकी खिदमत किया करेगा.

इसलिये ये दोनों मियां-बीवी रसूलुल्लाहﷺ की खिदमत में हजरत अनस (रदी) को लेकर हाज़िर हुये. उस वकत ये बच्चे थे. उन्होंने आकर अर्ज़ किया की ये हमारा लडका बडा अक्लमन्द और होशियार है. हमारा दिल चाहता है की ये आपकी खिदमत में रहे और आपके लिये बतौर खादिम के काम करे. रसूलुल्लाहﷺ ने कबूल फरमा लिया.

चुनान्चे उन्के मां-बाप उन्को छोडकर चले गये. हजरत अनस (रदी) दस साल तक रसूलुल्लाहﷺ की खिदमत में रहे.

इस मुद्दत में रसूलुल्लाहﷺ ने उन्के साथ क्या रवैया रखा? इस्के बारे में वो खुद फरमाते है कि मेंने रसूलुल्लाहﷺ की दस साल खिदमत की लेकिन इस अर्से में रसूलुल्लाहﷺ ने मुझे उफ तक नहीं कहा और ना डांटा ना डपटा, ना कभी मुझसे ये फरमाया की ये काम क्यू किया? और ना कभी ये फरमाया की ये काम क्यू नहीं किया? ये मामूली बात नहीं. कहने को

तो आसान है लेकिन जब कोई इस सुन्नत पर अमल करने का इरादा करे तो उस वकत उस्को पता चले की इस सुन्नत पर अमल करने के लिये कितना दिल-गुर्दा चाहिये.

हम आसान-आसान सुन्नतों पर तो अमल कर लेते है लेकिन ये भी रसूलुल्लाहﷺ की सुन्नत है. अल्लाह तआला हमें इन सब पर अमल करने की तौफीक अता फरमाये. आमीन.

एक बार का वाकिया - खुद हजरत अनस (रदी) अपना वाकिया बयान करते है की एक बार रसूलुल्लाहﷺ ने मुझे किसी काम के लिये भेजा की फलां काम कर आवो. में घर से निकला तो बाहर कुछ खेल-तमाशा हो रहा था. में उस खेल-तमाशे में लग गया और जिस काम के लिये रसूलुल्लाहﷺ ने मुझे भेजा था वो भूल गया.

अब रसूलुल्लाहﷺ इस इन्तेज़ार में थे की में वापस आकर बताउं की उस काम का क्या हुवा? जब काफी देर गुज़र गयी और में वापस नहीं पहुंचा तो रसूलुल्लाहﷺ बाहर तशरीफ लाये और जाकर वो काम खुद कर लिया जिस्के लिये मुझे

भेजा था. आप वो काम करके वापस आये तो आपने देखा की में बच्चों के साथ खेल रहा हूं. जब मेरी नज़र आप पर पडी तो मुझे ख्याल आया की मुझसे गलती हो गयी. आपने मुझे काम से भेजा था और में खेल में लग गया.

मुझे सदमा भी हुवा और फिक्र भी हुई की रसूलुल्लाहﷺ नाराज होगे. चुनान्चे मेंने रसूलुल्लाहﷺ के पास जाकर अर्ज किया या रसूलुल्लाह! जब में घर से बाहर निकला तो में वो काम करना भूल गया और बच्चों के साथ खेल में लग गया. आपने फरमाया की कोई बात नहीं में वो काम खुद कर आया. आपने मुझको ना डांटा ना डप्टा और ना कोई और सज़ा दी.

अच्छे सुलूक के नतीजे में बिगाड नहीं होता - आज हम लोग तावीलें पड लेते है की अगर हम अपने नौकर और अपने खादिम के साथ ये तरीका अपनायेगे तो वो सरफिरा हो जायेगा. वो हमारे सर चढ जायेगा वगैरह.

ये देखये की आखिर ये ख्याल रसूलुल्लाहﷺ को भी तो आता होगा की अगर में सख्ती नहीं करूंगा तो ये सर्कश हो जायेगा

लेकिन आप जानते थे की अच्छे सुलूक का मामला में उस्के साथ कर रहा हूं उस्के अन्दर अदब सीखने और तालीम की सलाहियत मौजूद है.

चुनान्चे उस दस साल के अर्से में हजरत अनस (रदी) के अन्दर कोई बिगाड पैदा नहीं हुवा.

बहरहाल ये वो बेहतरीन सुलूक है जिसकी मिसाल रसूलुल्लाहﷺ ने कायम फरमाई है. और आपने सहाबा किराम (रदी) को जिसकी ताकीद फरमाई.

हजरत अबूज़र गिफारी (रदी) को तम्बीह - एक बार रसूलुल्लाहﷺ तशरीफ लेजा रहे थे. आपने हजरत अबूज़र गिफारी (रदी) को देखा की वो अपने गुलाम को डांट रहे है और वो गुलाम हब्शी था. इसलिये उस्को ये कह रहे थे की ऐ हब्शी तू ये कर रहा है?

हुजूरﷺ ने जब ये अलफाज़ सुने तो आपने फरमाया ऐ अबूज़र! तुम्हारे अन्दर अभी तक जाहिलीयत (इस्लाम से पहले ज़माने) की खू-बू बाकी है, इसलिये तुम अपने गुलाम

को हब्शी कह कर खिताब कर रहे हो.

हजरत अबूज़र गिफारी (रदी) ये सुनकर रो पडे और फिर बाद में बार-बार रसूलुल्लाहﷺ के इस जुमले को याद किया करते थे की आपने मेरे बारे में ये जुमला फरमाया था.

हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रदी) का गुलाम पर नाराज़ होना - हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रदी) एक बार अपने गुलाम पर नाराज़ हो रहे थे और लानत का कलिमा कह रहे थे. रसूलुल्लाहﷺ ने जब ये जुमला सुना तो फरमाया की सिद्दीक भी बनते हो और लानत भी करते हो.

काबा के रब की कसम! ये दोनों बातें एक साथ जमा नहीं हो सकती. अगर सिद्दीक हो तो लानत नहीं कर सकते और अगर लानत कर रहे हो तो सिद्दीक नहीं हो सकते.

ये सुनते ही हजरत अबू बक्र सिद्दीक (रदी) कांप गये और जिस गुलाम को लानत कर रहे थे उस्को तो आज़ाद किया ही होगा उस्के अलावा और भी बहुत से गुलाम उस दिन आज़ाद कर दिये.

मातेहतों के साथ तौहीन का मामला ना करो - अपने गुलामों, अपने मातेहतों और अपने नौकरों के साथ मामला करने के बारे में हमारे उपर गफलत तारी है की जब चाहा उन्को बुरा-भला कह दिया. जब चाहा उन्को गाली दे दी. या उन्को ऐसा कलिमा कह दिया जो दिल तोडने वाला हो. या उन्को अपमान करने और तौहीन के अन्दाज़ में डांट दिया, ये सब मना है.

इसलिये अगर तुम्हारा कोई नौकर है तो उस्को भाईयों की तरह रखो. भाईयों जैसा सुलूक करो. उस्के बारे में ये सोचो की ये भी तुम्हारी तरह इन्सान है. इस्के सीने में भी दिल धडकता है. इस्के दिल में भी ख्वाहिशें पैदा होती है. इस्के दिल में भी जज़्बात और ख्यालात है. इस्की भी ज़रूरतें और हाजते है. ये तो कोई बात ना हुई की नौकर के साथ जानवरों जैसा सुलूक करो.

ये पश्चिमी तहज़ीब की लानत है - अमीर (सरदार) और मामूर (मातेहत) के दरमियान, हाकिम और महकूम के

दरमियान, अफसर और मातेहत के दरमियान जो दीवारें खडी की है, वो पश्चिमी तहज़ीब (सभ्यता) ने खडी की है. जिस्के नतीजे में आज अफसर का मामला अपने मातेहत के साथ जानवरों जैसा होकर रह गया है. आज इस्के असरात हमारे समाज में भी फैल रहे है.

ड्राईवर के साथ सुलूक - आज ड्राईवर के साथ हमारे समाज में जानवरों जैसा सुलूक होता है. हां! अरब वालो के अन्दर अब तक पुराने इस्लामी समाज की कुछ झलकियां बाकी है. वे लोग अपने ड्राईवर को भाईयों जैसा दर्जा देते है. चुनान्चे गाडी में सफर करके जब किसी जगह पर उतरेंगे तो उस ड्राईवर से कहेंगे "आप का शुक्रिया की आपने हमें यहां तक पहुंचा दिया".

जब कहीं खाना खायेंगे तो ड्राईवर को साथ बिठाकर खाना खिलायेंगे.

उनके साथ भाईयों जैसा बर्ताव करेंगे. ये सब पुराने इस्लामी समाज की झलक है.

हमारे यहां ये रिवाज है की ड्राईवर को साथ बिठाकर नहीं खिलाते. खुद घर में बैठकर खा लेते है और वो बाहर गाडी में बैठा होता है. उस्के खाने की कोई परवाह नहीं होती.

ये सब बातें हमारे अन्दर गैर-इस्लामी समाज की आ गयी है.

रसूलुल्लाहﷺ की सुन्नत वो है जो इस हदीस में बयान हुई और सहाबा किराम (रदी) के इन वाकियात से साबित होती है जो मेंने बयान किये.

अल्लाह तआला हम सब्को इस्के समझने और इस पर अमल करने की तौफीक अता फरमाये. आमीन.